दीपक बुदकी

मुख़बिर

शहर में अफवाह फैली कि मुखबिरों को मौत के घाट उतारा जा रहा है। पिछले पचास वर्षों में घाटी में हत्या की एक भी घटना सुनने में नहीं आई थी किंतु अब तो आये दिन पांच-दस लोग गोलियों के शिकार हो रहे थे।

प्रत्येक चेहरा मौत के डर से भयभीत नज़र आ रहा था। अपने आप पर विश्वास करना मुश्किल हो रहा था। हर कोई अपने आप से प्रश्न करता, ''कहीं मुखबिरों की सूची में मेरा नाम तो नहीं....? किसी पुलिस वाले से मेरी जान-पहचान तो नहीं...? या फिर मुझे किसी सिपाही से बातें करते हुए किसी ने देखा तो नहीं...?''

उसके दिल की धड़कन बढ़ जाती।

''कहीं किसी को मेरे राजनीतिक संबंधों का ज्ञान तो नहीं...?''

उसके दिल की धड़कनें और तेज़ हो जाती हैं।

''किसी गुण्डे से मेरी कोई शत्रुता तो नहीं?...''

वह इतना भयभीत हो जाता कि उसका रक्तचाप बढ़कर सीमा पार कर जाता। दूसरे दिन आंख खुलते ही किसी स्थानीय अखबार के कार्यालय में जा पहुंचता। विज्ञापन के द्वारा अपना स्पष्टीकरण देता ताकि लोगों को मालूम हो जाए कि वह न किसी राजनीतिक दल से सम्बन्ध रखता है और न किसी गुप्तचर संस्था से जुड़ा है।

मौत इतनी डरावनी नहीं होती जितनी कि उसकी आहट।

हर व्यक्ति मौत से बचने के उपाय ढूंढ रहा था। प्रतिदिन समाचार पत्रों में क्षमायाचनाएं छपती

रहतीं। कोई अपने निर्दोष होने का स्पष्टीकरण देता तो कोई घाटी को ही हमेशा के लिए अलविदा कह देता।

परन्तु नीलकंठ ने ऐसा कुछ भी नहीं किया। उसने अपनी ज़िन्दगी के पैंसठ वर्ष हंसी खुशी, आराम और संतोष से बिताये थे और अब इस प्रतिकूल वातावरण में भी निर्भय और सुखी जीवन जी रहा था। कश्मीरी पंडितों की अधिकांश आबादी हब्बाकदल में रहती थी। इसी हब्बाकदल में झेलम के किनारे नीलकंठ का मकान स्थित था जो पुरानी महाराजी ईंटों से बना हुआ था। दीवारें मिट्टी से लिपी पुती थीं और छत पर शिंगल बिछी हुई थी।

सारे शहर में हब्बाकदल ही एक ऐसी जगह थी जहां मुर्गे की बांग के साथ ही ज़िन्दगी चहक उठती। इधर मस्जिदों में भोर की अज़ान और उधर मन्दिरों में घंटों की मधुर गूंज नगरवासियों को जगा देती। पुल के दोनों ओर खोमचे वालों की लम्बी कतारें लग जातीं। चीखते-पुकारते सब्जी विक्रेता, कसमों पर कसमें खाते मछली-विक्रेता और मोल भाव करते ग्राहक। एक ओर नानबाइयों के तन्दूरों से खुशबू उठती तो दूसरी ओर हलवाइयों की कढ़ाइयों से दूध की महक। कोई गायत्री मंत्र का जाप करते हुए मछलियां परखता तो कोई कुरान की आयत पढ़ते हुए नदरू को जांचता। फिर पूरे दिन घोड़ों के टापों की टप-टप, साइकिलों की ट्रिन-ट्रिन और आटो रिक्शों की गड़गड़ाहट सुनने को मिलती और यह शोरोगुल आधी रात तक बना रहता। स्कूल और कॉलेज-टाइम पर इस जगह की रौनक देखते ही बनती थी। सफेद सलवार और कुर्तों में सुन्दर लड़कियों की अनंत पंक्तियां और उनका पीछा करते हुए नवयुवक जो हमेशा छेड़छाड़ की ताक में लगे रहते और अवसर पाते ही इधर उधर की टिप्पणियां करते।

आज नीलकंठ पता नहीं क्यों गहरी सोच में पड़ा हुआ था। उसकी बूढ़ी अर्धांगिनी ने हुक्के में नल का ताजा पानी भर दिया था। नीलकंठ ने चिलम में तम्बाकू डाला और फिर अपनी कांगड़ी में से दो तीन अंगारे निकाल कर इस पर रख दिए। उसके मुंह से धुएं के बादल छूटने लगे और साथ ही खांसी का दौरा पड़ गया जिसके कारण उसके विचारों का सिलसिला टूट गया, मगर उसने शीघ्र ही अपने आप पर काबू पा लिया।

शादी के दिन उसे केवल पुल पार करने की ज़रूरत पड़ी थी। अरनदत्ती का मकान नदी के उस पार था। खिड़की से वह अपनी पत्नी का मकान साफ़ तौर पर देख सकता था। दोनों मकानों के बीच झेलम नदी बड़ी ही शान शौकत से बह रही थी।

छोटे-मोटे घरेलू काम निपटा कर अरनदत्ती भी पास ही आकर बैठ गई।

"समय बीतने का एहसास भी नहीं होता। देखते ही देखते हमारी शादी को पैंतालीस वर्ष हो गए।" नीलकंठ ने अरनदत्ती की तरफ प्यार भरी नज़रों से देखते हुए कहा।

"आप को तो दिल लगी सूझी है। भला आज शादी की याद कैसे आ गई?" अरनदत्ती आश्चर्यचकित हुई।

"बस यूं ही। मालूम है आज कौन सी तारीख है?"

"इस उम्र में तारीख-वारीख कौन देखता है? मुझे तो स्वयं अपना आप भी बीते साल का कलेंडर सा लग रहा है जो दीवार पर केवल इसलिए टंगा रहता है कि इस पर भगवान का चित्र बना

रहता है। उसको फाड़कर फेंकने की किसी में हिम्मत नहीं होती जब तक वह अपने आप ही फट नहीं जाता। आप को नहीं लगता कि हम भी इन्हीं काग़ज़ के देवी-देवताओं की भांति दीवारों के साथ चिपके हुए हैं?'' वह बोली।

''तुम सच कह रही हो अरनी। हम भी दीवार पर लटके हुए इन्हीं कलेंडरों के समान अपनी जीवन-लीला समाप्त होने का इंतज़ार कर रहे हैं।''

इसी बीच अरनदत्ती को याद आया कि उसने हीटर पर कहवे की केतली चढ़ा रखी है। ''शायद अब तक उबल गयी होगी'' वह सोचने लगी और दीवार का सहारा लेकर उठ खड़ी हुई। वह केतली और दो खासू (कांसे के प्याले) उठाकर ले आई। नीलकंठ ने हुक्के की पाइप ज़मीन पर रख दी और अपने फिरन के बाजू से खासू को पकड़ लिया। अरनदत्ती ने खासू में गर्म-गर्म चाय उंड़ेल दी।

''अरनी! याद है जब शादी से पहले मैं अपनी छत पर चढ़कर तुम्हें घंटों देखता रहता था?''

''आज आपको क्या हो गया है? कैसी बहकी-बहकी बातें कर रहे हैं?''

उसके बाद अरनदत्ती स्वयं भी बचपन की भूलभुलैयों में खो गयी। आयु में अरनदत्ती अपने पति से सिर्फ पांच वर्ष छोटी थी परन्तु पिछले दस वर्षों में गठिया रोग से उसके हाथों की उंगलियों में सूजन आ गई थी और वह अपनी उम्र से बड़ी लग रही थी। सर्दियों में हालत और भी अधिक बदतर हो जाती। उठने-बैठने में बड़ा कष्ट होता, मगर मजबूरी थी। घर का काम संभालने वाला कोई न था।

''बहुत दिनों से मेरी दाहिनी आंख फड़क रही है। पता नहीं कौन सी मुसीबत आने वाली है।'' अरनदत्ती ने चटाई से पास का एक तिनका निकाल कर उस पर थूक मली और फिर अपनी दाहिनी आंख पर इस आशा से चिपका दिया कि उससे आंख का फड़कना बन्द हो जाएगा।

''भगवान की जो इच्छा। होनी तो होकर ही रहेगी।'' नीलकंठ की बातों में उदासी थी।

अरनदत्ती ने इससे पहले कभी भी अपने पति को इतना चिन्तित नहीं पाया था। बहुत कुरेदने के बावजूद उसे सही उत्तर नहीं मिला। वह अंदर ही अंदर कुढ़ती रही। बहुत दिनों से उसे यह आभास हुआ था कि नीलकंठ शाम होते ही मकान की खिड़कियां और दरवाज़े बन्द कर लेता है और बार-बार उनकी जांच करके स्वयं को उसके बंद होने का विश्वास दिलाता है। कभी-कभी वह रात में जागकर सावधानी से खिड़की के परदे को ज़रा सा हटा लेता और बाहर की स्थिति को आंकता। फौजी गाड़ियों की भागदौड़ और गश्ती दलों के कदमों की चाप के सिवा और कुछ भी सुनाई न देता।

''ऐसी चिन्ता से क्या लाभ! भगवान पर भरोसा रखो।'' पति की दुर्दशा देखकर अरनदत्ती उसे ढ़ाढ़स बंधाने की कोशिश करने लगी।

''अरनी तुम्हें नहीं मालूम, हालात बहुत खराब हो चुके हैं। हर जगह मौत का तांडव हो रहा है। भगवान ही जानता है कि आगे क्या होने वाला है।'' नीलकंठ से रहा नहीं गया। उसने अंततः सच्ची बात उगल ही दी।

अरनदत्ती को अपने बचपन के वो दिन याद आए जब कश्मीर की घाटी पर कबाइलियों ने हमला किया था। उन दिनों वह अठारह वर्ष की थी। आए दिन लूट, हत्या और बलात्कार की भयानक घटनाएं घट रही थीं।

श्रीनगर शहर में सूचना मिली कि कबाइलियों ने बारामूला में हजारों निहत्थे लोगों की हत्या की। कॉन्वेन्ट-स्कूल में घुसकर कई मठ वासिनियों को अपनी काम-वासना का शिकार बनाया और अब वे श्रीनगर की ओर बढ़ रहे हैं।

शहर की औरतें खासकर लड़कियों ने तय कर लिया कि इज्जत गंवाने से बेहतर है कि बिजली की नंगी तारों से लटककर जान दे दी जाए। किन्तु दुर्भाग्य से ठीक समय पर सारे शहर से बिजली चली गई और वे देखती ही रह गयीं। पल-पल मौत महंगी होती गई। फिर एक रोज़ सूचना मिली कि भारतीय सेना ने कबाइली आक्रमणकारियों को भगा दिया। सभी ने चैन की सांस ली। अरनदत्ती ने उन दिनों काफ़ी सूझ-बूझ और साहस से काम लिया था जिस पर वह आज भी गर्व करती थी। वह बात-बात पर अपने साहस का स्मरण करती और अब जबकि वैसी ही परिस्थितियां फिर सामने आई थीं वह अपने पति को समझाने लगी।

''निराश होने से कोई फायदा नहीं जी। हमने तो कबाइली-रेड देखा है। उसके मुकाबले में तो ये घटनाएं कुछ भी नहीं। जैसे-तैसे झेल ही लेंगे। आप दिल छोटा न करें।''

हो सकता है कि नीलकंठ अपनी पत्नी का हौसला देखकर चैन की सांस लेता मगर दूसरे ही पल उसे अपनी पत्नी की सादगी और भोलेपन पर तरस आने लगा। वह रोज सवेरे उठकर समाचार पत्रों की एक-एक लाइन चाट लेता ताकि उसको होने वाली घटनाओं की जानकारी मिलती रहे। दिन प्रतिदिन समाचार डरावने लग रहे थे।

''ये सब आपका ही किया कराया है। वीरु ने कितनी बार अमेरिका बुलाया, हर बार आप ने मना कर दिया। भगवान जाने ऐसी कौन सी वस्तु है जिसके मोह ने आपको यहां जकड़ रखा है। माना उसकी पत्नी अमेरिकन है तो क्या हुआ? हमें उससे क्या लेना देना। आखिर घर से निकाल तो न देती। किसी कोने में हम भी पड़े रहते।'' अरनदत्ती ने आज अपने दिल की भड़ास निकाल ही दी।

''प्रश्न वीरु की पत्नी का नहीं है, तुम नहीं समझोगी। इस उम्र में इतनी दूर जाकर रहने की कल्पना से ही दिल घबराता है। इतनी उम्र गुज़र गई, बनिहाल से आगे कभी कदम भी न रखा। अब इस बुढ़ापे में समुद्र के उस पार कहां जाएं? क्या मालूम कैसा देश होगा? कैसे लोग होंगे? वहां का रहन सहन कैसा होगा? और तुम सारा दोष मुझ पर ही क्यों लाद रही हो? तुम्हारी भी तो जाने की इच्छा नहीं थी।'' उसके स्वर में उत्तेजना थी।

''अच्छा जी, वीरु की बात छोड़ दो। काकी ने भी तो मुम्बई बुलाया था। आप ने तो उसको भी इनकार कर दिया। कहा, बेटी के घर का खाना गौ-मांस के बराबर होता है। भूल गए क्या?''

''अरनी, इन बातों को तुम नहीं समझोगी। अगर उन्हें सचमुच हमारी ज़रूरत होती तो आकर हमें ले जाते। हम मना थोड़े ही करते।''

''वे बेचारे तो दोनों आने के लिए तैयार थे किन्तु आपसे डरते हैं। आप की बात तो पत्थर

की लकीर होती है। आपने तो अपने पत्रों में साफ़-साफ़ मना किया था फिर वे कैसे आते?''

वीरु और काकी दोनों अपने परिवारों की देख-रेख में व्यस्त थे और यहां बूढ़ा और बुढ़िया कलेन्डर की तारीखें गिनते हुए दिन काट रहे थे...

''आज श्रावण कृष्ण-पक्ष की सातवीं तारीख है। वीरु के बेटे का जन्म दिन है। उठकर पीले चावल (तहरी) बनाओ।''

''आज जन्माष्टमी है, काकी की बेटी आज के दिन ही पैदा हुई थी। उसे तार भेज दिया या नहीं?''

दोनों पति पत्नी को वीरु, काकी और उनके बाल-बच्चों की बहुत याद आती थी। बहुत दिनों से कोई पत्र नहीं मिला था। बुढ़ापा और उस पर बाल बच्चों का वियोग... कितना जानलेवा होता है। आंखें तरस जातीं हैं बच्चों को देखने के लिए और वो समझते हैं कि ये सब मां-बाप की स्वार्थपरता है।

''कल सुबह बेटे को पत्र डालना। कह देना कि हमको टिकट भेज दो। हम आने के लिए तैयार हैं।'' अरनदत्ती ने आदेशात्मक अंदाज़ में कहा।

''मैं भी यही सोच रहा हूं। काकी से भी बात करके देख लूंगा। कुछ दिन मुम्बई चले जाएंगे और फिर वहीं से वीरु के पास चले जाएंगे।'' अरनदत्ती ने नाइट-लैम्प रोशन करके ट्यूब-लाइट बुझा दी।

नीलकंठ फिर भी बेचैन था। वह उठ खड़ा हुआ। सभी खिड़कियों और दरवाजों का निरीक्षण किया। जब तक उसे पूरा विश्वास न हुआ कि कहीं से कोई खतरा नहीं है वह कमरे में इधर-उधर टहलता रहा।

फिर उसने अपनी सुलगती कांगड़ी अरनदत्ती को थमा दी और बिस्तर में घुस गया।

नींद आंखों से कोसों दूर थी। वह करवटें बदलता रहा। इतने में द्वार पर दस्तक हुई। दोनों आत्माएं कांप उठीं। अपने आपको समेटते हुए वे अपने बिस्तरे में दुबक गए। उन्होंने अपनी सांसों का उतार-चढ़ाव भी रोक लिया।

उधर तड़ाक् से दरवाजा टूटने की आवाज आई। उसके पश्चात् कमरे के दरवाज़े पर किसी ने लात मारी। दरवाजा घाव की तरह खुल गया। मुंह को काले कपड़े से छिपाए दो नकाबपोश युवक हाथों में स्टेनगन लिए कमरे में घुस आए उन्होंने आगे देखा न पीछे, बिस्तर की ओर निशाना बांधे अन्धाधुंध कई गोलियां चलाईं, मगर उससे पहले ही दोनों बुज़ुर्ग प्राणियों ने खौफ़ और दहशत से अपने प्राण त्याग दिये थे। फिर भी बहते हुए खून से दोनों बिस्तर लहूलुहान हो गए।

हथियारों से लैस युवक मुड़े और अपने पीछे रहस्यमय खामोशी छोड़कर वापस चले गए।

दूसरे रोज़ श्रीनगर के सभी स्थानीय समाचार-पत्रों में यह समाचार सुर्खियों में छप गया।

''हब्बाकदल में मुजाहिदों ने दो मुखबिरों नीलकंठ और अरनदत्ती, को हलाक् कर दिया। उन पर शक था कि वे भारतीय सेना के लिए मुख़बरी का काम करते थे।''

(उर्दू से अनुवाद : चंद्रमोहन भट्ट)